4. हमले के समर्थन में (डी) याचिकाकर्ताओं के जानकार अधिवक्ता ने हरियाणा नगरपालिका सामान्य भूमि (नियमन) अधिनियम, 1974 की धारा 4 और 7 की संवैधानिक वैधता को चुनौती दी है। याचिका में या फुल बेंच के समक्ष, जिसने परसों संविधान संबंधी वैधता के प्रश्नों पर विचार किया, ऐसी कोई चुनौती नहीं दी गई थी। न ही याचिका में संशोधन के लिए फुल बेंच से कोई अनुमति मांगी गई थी। इस मामले के दृष्टिकोण से हम श्री मित्तल को यह बिंदु उठाने की अनुमति देने से इनकार करते हैं।
5. परिणामस्वरूप याचिका असफल होती है और इसे खारिज कर दिया जाता है, लेकिन खर्च के संबंध में कोई आदेश नहीं दिया जाता है।

के. टी. एस.

श्री के. एस. तिवाना, जे. के समक्ष

सतगुरु जगजीत सिंह और अन्य - याचिकाकर्ता

बनाम

जीत कौर और अन्य - प्रतिवादी

दंड विविध सं. 1977 का 3977-एम

31 मार्च 1978

दंड प्रक्रिया संहिता (1974 का 2)-धारा 145 और 146 (1) - धारा 146 (1) के तहत लगान-क्या यह धारा 145 के तहत कार्यवाही की समाप्ति का कारण बनता है-मजिस्ट्रेट-क्या लगान के बाद धारा 145 (4) के तहत कब्जे का निर्धारण करने के लिए आगे बढ़ सकते हैं।

यह माना गया है कि यदि एक मजिस्ट्रेट गंभीर परिस्थिति की पहचान करते हुए दंड प्रक्रिया संहिता 1973 की धारा 146(1) के तहत विवाद के विषय को जब्त करने के लिए विवेक का प्रयोग करता है, तो इसका यह परिणाम नहीं हो सकता कि धारा 145 के तहत कार्यवाही स्वतः समाप्त हो जाए। इस संहिता में इस प्रावधान

सतगुरु जगजीत सिंह और अन्य बनाम जीत कौर व अन्य

(के. एस. तिवाना जे)

का उद्देश्य भूमि या जल के संबंध में विवाद के संबंध में पक्षों के बीच संघर्ष को कम करना और यह निर्धारित करना है कि आदेश की तारीख को विवाद के विषय का कब्जा किसके पास था या किसे रिपोर्ट के दो महीने के भीतर गलत तरीके से बेदखल कर दिया गया था। संहिता की धारा 145 के तहत शुरू की गई कार्यवाही को संहिता के अध्याय X, 'D' भाग के प्रावधानों के अनुसार तार्किक अंत तक ले जाना होगा और लगान के बाद प्रतिस्पर्धी पक्षों को बीच में छोड़कर इसे बंद नहीं किया जा सकता। इससे यह नहीं निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि कब्जा उस व्यक्ति को नहीं मिलेगा जिसे गलत तरीके से बेदखल किया गया है, इसके बावजूद तथ्य यह है कि धारा 145 में उल्लिखित दावे और साक्ष्य उसे मजिस्ट्रेट द्वारा कब्जे की बहाली का हकदार बनाते हैं। इस प्रकार, नई संहिता की धारा 146 (1) के तहत लगान धारा 145 के तहत कार्यवाही की समाप्ति का कारण नहीं बनता है और संहिता की धारा 145 (1) के तहत प्रारंभिक आदेश पारित करने वाले मजिस्ट्रेट को इस मामले को आगे बढ़ाने का अधिकार है और पक्षों के बयानों और उनके सामने प्रस्तुत साक्ष्यों के मद्देनजर संहिता की धारा 145 (4) के प्रावधानों के अनुसार कब्जे का निर्धारण करना होगा।

(पैराग्राफ 7 और 12)

असहमति

चंदी प्रसाद और अन्य बनाम ओम प्रकाश कनोडिया और अन्य, 1976, आपराधिक कानून पत्रिका 209

मोहम्मद मुस्लेहुद्दीन और एक अन्य बनाम मोहम्मद सलाहुद्दीन, 1976 आपराधिक कानून पत्रिका 1150

हाकिम सिंह और अन्य बनाम गिरवर सिंह और अन्य, 1976 आपराधिक कानून पत्रिका 1915

दंडपाणि पाला और अन्य बनाम मदन मोहन पाला और अन्य, 1976 आपराधिक कानून पत्रिका 2014

मनसुख राम बनाम राज्य और एक अन्य, 1977 आपराधिक कानून पत्रिका 563

असहमति

नई आपराधिक प्रक्रिया संहिता, 1974 की धारा 482 के तहत याचिका, जिसमें प्रार्थना की गई है कि निचली अदालत के आदेशों को जिनमें आगे के साक्ष्यों के उत्पादन के लिए निर्देश दिए गए हैं जिसमें 21 जून, 1977

और अन्य तारीखों के आदेश भी शामिल हैं और संहिता की धारा 146(1) के तहत विवादित संपत्ति के लगान के बाद लिए गए पूरे कार्यवाही को रद्द कर दिया जाए और निचली अदालत को निर्देश दिया जाए कि वह अपना हाथ रोके और सिविल कोर्ट के फैसले का इंतजार करे जो विवादित संपत्ति के शीर्षक और पक्षों के कब्जे के संबंध में हो। इसके अलावा, जो भी आदेश न्यायसंगत और उचित हो वह पारित किया जा सकता है। इस याचिका के फैसले की प्रतीक्षा में निचली अदालत में आगे की कार्यवाही रोकी जा सकती है।

एच. एस. गुजराल, अधिवक्ता, याचिकाकर्ता के लिए

(एन. एस. गुजराल, अधिवक्ता उनके साथ)

हरबंस सिंह, अधिवक्ता, प्रतिवादी 1 और 2 के लिए

एस. एस. अहलावत, राज्य के लिए

आशुतोष मोहुंता, अधिवक्ता, प्रतिवादी 1 और 2 के लिए

निर्णय

के. एस. तिवाना, जे. -- आपराधिक प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 482 के तहत इस याचिका के तथ्य यह हैं कि पुलिस द्वारा विवादित भूमि के कब्जे को लेकर पक्षों के बीच शांति भंग की आशंका की एक रिपोर्ट सिरसा के कार्यकारी मजिस्ट्रेट को दी गई थी, जिन्होंने नई संहिता की धारा 145(1) के तहत आदेश पारित किए और नई संहिता की धारा 146(1) के तहत विवादित विषय-वस्तु को जब्त कर लिया। उन्होंने पक्षों को अपने दावों के लिखित बयान देने और साक्ष्य प्रस्तुत करने का निर्देश दिया। उनके सामने कुछ साक्ष्य की जांच की गई थी। याचिकाकर्ताओं ने इस आधार पर इस न्यायालय में यह याचिका दायर की है कि नई संहिता की धारा 146(1) के तहत एक बार जब्ती हो जाने के बाद, धारा 145 के तहत कार्यवाही समाप्त हो जाती है और मजिस्ट्रेट बन जाते हैं। वह मजिस्ट्रेट द्वारा अब नई संहिता की धारा 145 के तहत ली जा रही कार्यवाही और उनके द्वारा दर्ज किए गए साक्ष्यों को रद्द करने की मांग करता है। याचिका का प्रतिवादी विरोध करते हैं।

(2) आपराधिक प्रक्रिया संहिता, 1898 (जिसे आगे ओल्ड कोड के रूप में संदर्भित किया जाएगा) को 1955 में संशोधित किया गया था और धारा 145 के उप-धारा (4) के तहत आपात स्थिति में मजिस्ट्रेट को जब्ती की शक्ति दी गई थी। कुछ मामलों में जहां मजिस्ट्रेट उस संहिता की धारा 145 के प्रावधानों के अनुसार विवादित विषय-वस्तु के कब्जे के बारे में स्वयं निर्णय नहीं कर सकते थे, उन्हें उस संहिता की धारा 146 के तहत मामले को सिविल कोर्ट को भेजने की शक्ति थी। नई संहिता में, धारा 145 से जब्ती की शक्ति को हटा दिया गया है और अब यह धारा 146(1) में प्रदान की गई है। मजिस्ट्रेट को सिविल कोर्ट को मामला भेजने का अधिकार भी हटा दिया गया है।

नई संहिता की धारा 145 और 146 इस प्रकार हैं:-

"145(1) जब कभी एक कार्यकारी मजिस्ट्रेट किसी पुलिस अधिकारी की रिपोर्ट या अन्य सूचना से संतुष्ट होता है कि किसी भूमि या जल या उसकी सीमाओं को लेकर उसके स्थानीय क्षेत्राधिकार में शांति भंग करने वाला विवाद मौजूद है, तो वह लिखित आदेश बनाएगा, जिसमें उसके ऐसा संतुष्ट होने के आधार बताए जाएंगे, और उस विवाद में संबंधित पक्षों को उसकी अदालत में व्यक्तिगत रूप से या वकील के माध्यम से, निर्दिष्ट तारीख और समय पर उपस्थित होने के लिए आदेश देता है, और विवाद के विषय के वास्तविक कब्जे के तथ्य के संबंध में अपने-अपने दावों के लिखित बयान जमा करने के लिए कहता है।

(2) इस धारा के उद्देश्यों के लिए, "भूमि या जल" शब्द में भवन, बाजार, मत्स्यपालन, फसलें या भूमि का अन्य उत्पादन, और ऐसी किसी भी संपत्ति के किराये या लाभ शामिल हैं।

(3) आदेश की प्रति कोड द्वारा निर्दिष्ट समन की सेवा की विधि द्वारा उन व्यक्ति या व्यक्तियों पर सेवित की जाएगी जिन्हें मजिस्ट्रेट निर्देशित करे, और कम से कम एक प्रति विवाद के विषय के पास या उसके निकट किसी प्रमुख स्थान पर चिपका कर प्रकाशित की जाएगी।

(4) तब मजिस्ट्रेट, किसी भी पक्ष के विवादित विषय के कब्जे के अधिकार के दावों के गुण-दोष का उल्लेख किए बिना, ऐसे बयानों को पढ़ेगा, पक्षों को सुनेगा, उनके द्वारा प्रस्तुत किए गए सभी साक्ष्यों को स्वीकार करेगा, यदि आवश्यक हो तो आगे के साक्ष्य लेगा और, यदि संभव हो तो निर्णय करेगा कि उप-धारा (1) के तहत उसके द्वारा बनाए गए आदेश की तारीख पर कौन और किस पक्ष के पास विवादित विषय का कब्जा था।

यदि मजिस्ट्रेट को ऐसा प्रतीत होता है कि किसी पक्ष को पुलिस अधिकारी की रिपोर्ट या अन्य सूचना मजिस्ट्रेट को प्राप्त होने की तारीख से ठीक दो महीने पहले या उसके बाद और उप-धारा (1) के तहत उसके आदेश की तारीख से पहले बलपूर्वक और अनुचित रूप से बेदखल किया गया है, तो वह उस पक्ष को ऐसे व्यवहार कर सकता है जैसे कि उप-धारा (1) के तहत उसके आदेश की तारीख पर वह पक्ष कब्जे में था।

(5) इस धारा में कुछ भी ऐसा नहीं होगा जो उपस्थित होने के लिए आवश्यक पक्ष, या किसी अन्य व्यक्ति को जो रुचि रखता है, यह दिखाने से रोके कि कोई ऐसा विवाद नहीं है या नहीं था, और ऐसे मामले में मजिस्ट्रेट अपने उक्त आदेश को रद्द कर देगा, और इस पर आगे की सभी कार्यवाही रुक जाएगी, लेकिन, ऐसे रद्दीकरण के अधीन, उप-धारा (1) के तहत मजिस्ट्रेट का आदेश अंतिम होगा।

(6) (a) यदि मजिस्ट्रेट यह निर्णय लेता है कि उप-धारा (4) के प्रावधान के अनुसार एक पक्ष था, या होना चाहिए, तो वह ऐसे पक्ष को उक्त विषय के कब्जे का हकदार घोषित करने का आदेश जारी करेगा जब तक कि विधिवत कानून के अनुसार उसे वहां से बेदखल नहीं किया जाता है, और ऐसे कब्जे को बाधित करने से मना करेगा जब तक कि ऐसी बेदखली नहीं हो जाती; और जब वह उप-धारा (4) के प्रावधान के तहत आगे बढ़ता है, तो वह बलपूर्वक और अनुचित रूप से बेदखल किए गए पक्ष को कब्जा पुनः प्रदान कर सकता है।

(b) इस उप-धारा के तहत बनाए गए आदेश को उप-धारा (3) में निर्दिष्ट तरीके से सेवित और प्रकाशित किया जाएगा।

(7) जब किसी ऐसी कार्यवाही के किसी पक्ष की मृत्यु हो जाती है, तो मजिस्ट्रेट मृतक पक्ष के कानूनी प्रतिनिधि को कार्यवाही में पक्ष बना सकता है और इसके बाद जांच जारी रख सकता है, और यदि किसी मृतक पक्ष के कानूनी प्रतिनिधि के लिए ऐसी कार्यवाही के उद्देश्यों के लिए कौन है, इस संबंध में कोई प्रश्न उठता है, तो सभी व्यक्ति जो मृतक पक्ष के प्रतिनिधि होने का दावा करते हैं, उन्हें उसमें पक्ष बनाया जाएगा।

(8) यदि मजिस्ट्रेट का मत है कि इस धारा के तहत उसके सामने लंबित किसी कार्यवाही में विवाद के विषय संपत्ति की कोई फसल या अन्य उत्पाद जल्दी और स्वाभाविक रूप से खराब होने के अधीन है, तो वह उस संपत्ति की उचित हिरासत या बिक्री के लिए आदेश दे सकता है, और जांच पूरी होने पर, उस संपत्ति, या उसकी बिक्री-प्राप्तियों के निपटान के लिए वह जो उचित समझे वैसा आदेश दे सकता है।

(9) मजिस्ट्रेट, यदि उचित समझे, तो इस धारा के तहत कार्यवाही के किसी भी चरण में, किसी भी पक्ष के आवेदन पर, किसी भी गवाह को समन जारी कर सकता है, जिससे उसे उपस्थित होने या किसी दस्तावेज या वस्तु को प्रस्तुत करने का निर्देश दिया जाता है।

(10) इस धारा में कुछ भी ऐसा नहीं माना जाएगा जो धारा 107 के तहत मजिस्ट्रेट की कार्यवाही करने की शक्तियों के विरोध में हो।

धारा 146(1)

यदि मजिस्ट्रेट किसी भी समय धारा 145 की उप-धारा (1) के तहत आदेश देने के बाद मामले को आपातकालीन मानता है, या यदि वह निर्णय लेता है कि धारा 145 में उल्लेखित ऐसे कब्जे में कोई भी पक्ष नहीं था, या यदि वह यह संतुष्ट नहीं कर सकता कि उनमें से कौन विवादित विषय के कब्जे में था, तो वह विवादित विषय को तब तक जब्त कर सकता है जब तक कि एक सक्षम अदालत उस संपत्ति के कब्जे के हकदार व्यक्ति के अधिकारों का निर्धारण नहीं कर देती।

बशर्ते कि ऐसा मजिस्ट्रेट किसी भी समय जब्ती वापस ले सकता है यदि वह संतुष्ट हो जाता है कि विवादित विषय के संबंध में अब शांति भंग की कोई संभावना नहीं है।

(2) * * * * *

(3) संहिता की धारा 146(1) के इस नए प्रावधान की व्याख्या ने देश के विभिन्न उच्च न्यायालयों में मतभेद पैदा किया है। चंदी प्रसाद और अन्य बनाम पार्कश कनोडिया और अन्य (1) मामले में इलाहाबाद उच्च न्यायालय की एकल पीठ, मोहम्मद मुस्लेहुद्दीन और एक अन्य बनाम मोहम्मद सलाहुद्दीन (2) मामले में पटना उच्च न्यायालय के एक जानकार एकल न्यायाधीश, हाकिम सिंह और अन्य बनाम गिरवर सिंह और अन्य (3) मामले में दिल्ली उच्च न्यायालय के एक जानकार एकल न्यायाधीश, दंडपाणि पाला और अन्य बनाम मदन मोहन पाला और अन्य (4) मामले में उड़ीसा उच्च न्यायालय की एक विभागीय पीठ और मनसुख राम बनाम राज्य और एक अन्य (5) मामले में राजस्थान उच्च न्यायालय के एक जानकार एकल न्यायाधीश ने नई संहिता की धारा 146(1) की व्याख्या करते हुए यह माना है कि जब मजिस्ट्रेट आपातकालीन स्थिति में विवाद के विषय को जब्त करता है, तो नई संहिता की धारा 145 के तहत कार्यवाही समाप्त हो जाती है और मजिस्ट्रेट का मामले में आगे बढ़ने का कोई अधिकार नहीं रहता। इस दृष्टिकोण के अनुसार, मामले को फिर सक्षम न्यायालय द्वारा निर्णयित किया जाना चाहिए और धारा 146(1) के तहत की गई जब्ती को ऐसे निर्णय तक जारी रखना चाहिए। इसके विपरीत, राम अधीन बनाम श्यामा देवी और अन्य (6) मामले में इलाहाबाद

उच्च न्यायालय के एक जानकार एकल न्यायाधीश और कैजितान ए. डी'सौजा और एक अन्य बनाम महाराष्ट्र राज्य और अन्य (7) मामले में बॉम्बे उच्च न्यायालय की एक डिवीजन बेंच ने एक पूर्ण विपरीत दृष्टिकोण व्यक्त किया है कि धारा 146(1) नई संहिता की धारा 145 के अधीन और सहायक है और धारा 145 के तहत शुरू की गई कार्यवाही धारा 146(1) के तहत जब्ती के बावजूद जारी रखनी होगी और मजिस्ट्रेट को धारा 145 के प्रावधानों के प्रकाश में कब्जे के प्रश्न का निर्णय करना होगा। इस दृष्टिकोण को चंदू नायक और अन्य बनाम सीताराम बी. नायक और एक अन्य (8) मामले से भी समर्थन मिलता है। हमारे उच्च न्यायालय का कोई भी मामला इस बिंदु पर मेरे ध्यान में नहीं लाया गया है।

(4) धारा 145 और धारा 146 की व्याख्या और निष्कर्षों के समर्थन में कारणों के बारे में दोनों दृष्टिकोणों पर ध्यान देना आवश्यक हो जाता है, जो काफी भिन्न हैं।

(5) चंदू प्रसाद के मामले (1), (सुपरा) में जानकार एकल न्यायाधीश ने निर्णय दिया:-

"हमें कानून की व्याख्या उसके मौजूदा रूप में करनी होगी। धारा 145 के तहत नई संहिता में जब्ती का कोई प्रावधान नहीं है, जो पुरानी आपराधिक प्रक्रिया संहिता की धारा 145(4) के तहत जब्ती के प्रावधान के समान है। प्रत्येक मामले में मजिस्ट्रेट द्वारा जब्ती का आदेश पारित करना आवश्यक नहीं है। वह तब आपराधिक प्रक्रिया संहिता की धारा 145 के तहत आगे बढ़ सकते हैं और अंतिम आदेश पारित कर सकते हैं। लेकिन जैसे ही वह जब्ती का आदेश पारित करते हैं, नई आपराधिक प्रक्रिया संहिता की धारा 146(1) के तहत प्रदान किए गए परिणामों का पालन करना होगा। 'मजिस्ट्रेट' शब्द का उपयोग स्पष्ट रूप से 'सक्षम प्राधिकारी' से भिन्न कुछ के रूप में किया गया है।"

सतगुरु जगजीत सिंह और अन्य बनाम जीत कौर व अन्य

(के. एस. तिवाना जे)

मोहम्मद मुस्लेहुद्दीन के मामले (2) (सुपर) में, जो तर्क उठाया गया था, वह यह था कि केवल इसलिए कि जानकार मजिस्ट्रेट ने विवादित संपत्ति को नई संहिता की धारा 146(1) के तहत जब्त कर लिया है, उसका धारा 145 की उप-धारा (4) के तहत कब्जे के प्रश्न का निर्णय करने का अधिकार समाप्त नहीं होता है और यहां तक कि यदि उसने संपत्ति को जब्त कर लिया है, तो भी वह यह निर्णय कर सकता है कि संबंधित समय

पर कौन सा पक्ष कब्जे में था। इस तर्क को जानकार न्यायाधीश ने स्वीकार नहीं किया। इसे खारिज करते हुए, जानकार न्यायाधीश ने कहा:-

"मैं इस तर्क को स्वीकार नहीं कर सकता। धारा 146 की उप-धारा (1) के प्रावधान के अनुसार, मजिस्ट्रेट केवल तभी जब्ती वापस ले सकता है जब वह संतुष्ट होता है कि विवादित विषय के संबंध में अब शांति भंग की कोई संभावना नहीं है। ऐसे मामले में, धारा 145 के तहत कार्यवाही को बंद करना होगा और संबंधित समय पर कौन सा पक्ष कब्जे में था, इसके निर्णय का कोई प्रश्न नहीं उठेगा। जब मजिस्ट्रेट विवादित विषय को जब्त करता है तो संपत्ति legis कस्टोडियन लेजिस बन जाती है, और इसलिए, संहिता में प्रावधान किया गया है कि मजिस्ट्रेट संपत्ति को जब्त करने के बाद, संपत्ति की देखभाल के लिए आवश्यक और उचित व्यवस्था कर सकता है या यदि उचित समझे तो उसका रिसीवर नियुक्त कर सकता है। मेरे विचार में, मजिस्ट्रेट धारा 145 के तहत यह निर्णय करने का अधिकारी नहीं है कि धारा 146(1) के तहत विवादित विषय को जब्त करने के बाद कौन सा पक्ष कब्जे में है। इसलिए, जानकार मजिस्ट्रेट द्वारा पक्षों को साक्ष्य प्रस्तुत करने का निर्देश देने वाला आदेश, ताकि वह धारा 146(1) के तहत विवादित विषय को जब्त करने के बाद कब्जे के प्रश्न का निर्णय कर सके, अवैध है।"

विद्वान न्यायाधीश ने आगे कहा:-

"यदि मजिस्ट्रेट धारा 146 के तहत कानूनी रूप से संपत्ति को जब्त कर सकता है, तो वह धारा 145 के तहत संहिता के अनुसार कब्जे के प्रश्न का निर्णय नहीं कर सकता। एक बार जब मजिस्ट्रेट यह मान लेता है कि यह आपातकाल का मामला है और वह धारा 146(1) के तहत विवादित विषय को जब्त करता है, तो उसे साक्ष्य लेने और यह निर्णय करने का अधिकार नहीं है कि संबंधित समय पर कौन सा पक्ष कब्जे में था। इन परिस्थितियों में, पूरे आपत्तिजनक आदेश को रद्द करना होगा।

आई.एल.आर. पंजाब व हरियाणा

हाकिम सिंह के मामले (3) (ऊपर) में, जानकार न्यायाधीश ने निम्नानुसार कहा:-

"अब, नई संहिता की धारा 145 ने पुरानी संहिता के तहत उप-धारा (4) के प्रावधान को समाप्त कर दिया है जो मजिस्ट्रेट को विवादित विषय को जब्त करने की शक्ति प्रदान करता था। लेकिन इसी तरह का प्रावधान

धारा 146 की उप-धारा (1) में जोड़ा गया है जो मजिस्ट्रेट को आपातकालीन मामला मानने पर संपत्ति को जब्त करने की शक्ति प्रदान करता है। 'इन बदलावों को करने में विधायक का इरादा स्पष्ट है। इसने मजिस्ट्रेट को विवाद को एक सिविल कोर्ट को भेजने की शक्तियां छीन ली हैं और पक्षों को उनके अधिकारों के निर्धारण के लिए सक्षम अदालत के पास जाने के लिए छोड़ दिया है। आखिरकार धारा 146 शांति भंग को रोकने के लिए एक निवारक उपाय है। यह उद्देश्य तब पूरा हो जाता है जब मजिस्ट्रेट विवादित विषय को जब्त करने का निर्णय करता है। एक बार जब उसने जब्ती कर दी होती है तो धारा 145 के तहत लंबित कार्यवाही समाप्त हो जाती है। वह बाद में जब्ती वापस ले सकता है अगर वह संतुष्ट हो जाता है कि शांति भंग की संभावना अब और नहीं है। लेकिन तब सभी कार्यवाही समाप्त हो जाएगी क्योंकि शांति भंग को रोकने का उद्देश्य प्राप्त हो जाएगा। यदि जब्ती जारी रहती है तो मजिस्ट्रेट की एकमात्र शक्ति एक रिसीवर नियुक्त करना होगा और इस प्रकार उप-धारा (2) के तहत कार्य करना होगा।"

दंडपाणि पाला के मामले (3) (ऊपर) में, उड़ीसा उच्च न्यायालय की एक विभाजन पीठ ने कहा:--

"तीन परिस्थितियां विचार की गई हैं जिनमें जब्ती का आदेश पारित किया जा सकता है:-

i) जहाँ मजिस्ट्रेट संतुष्ट हो कि मामला आपातकाल का है; या
ii) यदि मजिस्ट्रेट जांच के बाद यह निष्कर्ष निकालता है कि प्रारंभिक आदेश की तारीख या उससे दो महीने पहले बेदखली की स्थिति में किसी भी पक्ष का कब्जा नहीं था; या
iii) यदि मजिस्ट्रेट यह तय करने में असमर्थ हो कि उचित तिथि पर कौन सा पक्ष कब्जे में था। अंतिम दो स्थितियां केवल जांच पूरी होने के बाद ही उत्पन्न होंगी। संसद ने पहली स्थिति, अर्थात्, एक प्रारंभिक आदेश के पारित होने के बाद यदि मजिस्ट्रेट संतुष्ट होता है कि यह एक आपातकालीन मामला है, तो इसे अन्य दो स्थितियों के समकक्ष माना है। अन्य दो स्थितियों में आगे की जांच संभव नहीं है। इसलिए, यह तर्क देने का कोई अवसर नहीं है कि जब इनमें से पहली स्थिति पर एक आदेश पारित किया जाता है, तो धारा 145 के अंतर्गत प्रक्रिया जीवित रहती है और उस धारा में परिकल्पित जांच अभी भी की जानी है। इसके अलावा, प्रावधान की भाषा स्पष्ट पर्याप्त है जो इस निष्कर्ष का समर्थन करती है कि आपराधिक न्यायालय के समक्ष विवाद का अंत हो

जाता है और किस पक्ष को कब्जा प्राप्त करने का अधिकार है, इसे सक्षम न्यायालय द्वारा निर्धारित किया जाना चाहिए।"

इस विभाजन पीठ के अनुभवी न्यायाधीशों ने आगे निम्नलिखित प्रकार से निर्धारित किया:

"इस प्रकार, कानूनी स्थिति यह है कि एक बार जब धारा 146(1) के अंतर्गत आदेश तीनों स्थितियों में से किसी एक के अस्तित्व के बारे में संतुष्ट होकर पारित किया जाता है, तो धारा 145 के अंतर्गत प्रक्रिया समाप्त हो जाती है। इसलिए, धारा 146(1) के अंतर्गत अपने आदेश के संलग्न के बावजूद प्रक्रिया जारी रखने के लिए अनुभवी मजिस्ट्रेट का निर्देश, गलत है।"

(6) मानसुख राम के मामले (5) (सुप्रा) में, राजस्थान उच्च न्यायालय के एक अनुभवी एकल न्यायाधीश ने निम्नलिखित रूप में निर्धारित किया:-

"लेकिन नई आपराधिक प्रक्रिया संहिता के प्रारंभ होने के बाद, धारा 145 की उप-धारा (4) के तीसरे प्रावधान में आपातकालीन मामले में विवादित वस्तु के संलग्न की प्रावधान वहां से हटा दी गई है और इसे नई आपराधिक प्रक्रिया संहिता की धारा 146 की उप-धारा (1) में शामिल किया गया है। इस परिवर्तन के परिणामस्वरूप, उप-मंडल मजिस्ट्रेट अब विवादित संपत्ति को तब तक अनिश्चितकाल के लिए संलग्न कर सकता है जब तक कि एक सक्षम न्यायालय ने उसके संबंधित पक्षों के अधिकारों का निर्णय नहीं किया है। इस परिवर्तन के दृष्टिगत, नई आपराधिक प्रक्रिया संहिता की धारा 146 की उप-धारा (1) के अंतर्गत आपातकालीन आधार पर किया गया संलग्न अब तब तक जारी रहेगा जब तक कि एक सक्षम न्यायालय ने विवादित वस्तु के संबंधित पक्षों के अधिकारों का निर्णय करने के संबंध में कब्जा प्राप्त करने के हकदार व्यक्ति का निर्णय नहीं किया है। और उप-मंडल मजिस्ट्रेट को विवादित संपत्ति के कब्जे को उस पक्ष के पक्ष में देने की कोई शक्ति नहीं होगी जिसके पक्ष में वह अंततः नई आपराधिक प्रक्रिया संहिता की धारा 145 की उप-धारा (6)(ए) के अंतर्गत जांच के उपरांत एक अंतिम आदेश पारित कर सकता है। चूंकि आपातकालीन आधार पर एक बार किया गया संलग्न अब उप-मंडल मजिस्ट्रेट द्वारा विवादित वस्तु के कब्जे के प्रश्न पर एक पक्ष के पक्ष में निर्णय करने के बाद भी प्रभावी होता है, एक जांच जैसा कि नई आपराधिक प्रक्रिया संहिता की धारा 145 की उप-धारा (4) द्वारा परिकल्पित है, कोई उद्देश्य नहीं रखती है और मेरी राय में अनावश्यक होगी। इसमें कोई संदेह नहीं है कि उप-मंडल मजिस्ट्रेट विवादित वस्तु के संबंध में कब्जा प्राप्त करने के हकदार व्यक्ति के अधिकारों का निर्धारण

करने के लिए एक सक्षम न्यायालय नहीं है, क्योंकि नई आपराधिक प्रक्रिया संहिता की धारा 145 की उप-धारा (4) के अंतर्गत उसे केवल वास्तविक कब्जे के प्रश्न का निर्णय करना आवश्यक है, विवादित वस्तु के कब्जे के अधिकार के लिए किसी भी पक्ष के दावों या योग्यताओं के संदर्भ के बिना। उपर्युक्त चर्चा का परिणाम

यह है कि आपातकालीन मामले के रूप में माना जाने पर, नई आपराधिक प्रक्रिया संहिता की धारा 146 की उप-धारा (1) के तहत विवादित वस्तु के संलग्न के बाद, नई आपराधिक प्रक्रिया संहिता की धारा 145 की उप-धारा (4) द्वारा परिकल्पित कब्जे के प्रश्न पर उचित जांच का कोई उपयोग नहीं है, क्योंकि ऐसी जांच के बाद मजिस्ट्रेट द्वारा अंततः पारित किए जा सकने वाले अंतिम आदेश के बाद भी संलग्नता बनी रहेगी और उप-मंडल मजिस्ट्रेट के पास विजयी पक्ष को कब्जे में वापस लाने की कोई शक्ति नहीं होगी। इसलिए, आपातकालीन आधार पर एक बार विवादित वस्तु के संलग्न करने के बाद, उप-मंडल मजिस्ट्रेट को नई आपराधिक प्रक्रिया संहिता की धारा 145 के अंतर्गत आगे बढ़ने का अधिकार नहीं है, सिवाय इसके कि यह पता लगाने के लिए कि क्या कोई विवाद है या विवादित वस्तु के संबंध में शांति भंग की कोई संभावना अब और नहीं है, क्योंकि उस स्थिति में वह किसी भी समय संलग्नता वापस ले सकता है।"

उपरोक्त उद्धृत विचार के विपरीत दृष्टिकोण व्यक्त करते हुए, श्रीवास्तव, जे।, इलाहाबाद उच्च न्यायालय के राम आधिन बनाम श्यामा देवी और अन्य (6) (सुप्रा) मामले में, निम्नलिखित रूप में निर्धारित किया: -

"इस प्रकार, शाब्दिक व्याख्या से यह परिणाम निकलेगा कि जैसे ही मजिस्ट्रेट आपातकाल के कारण संपत्ति को संलग्न करता है, उसके पास कब्जे के प्रश्न का निर्णय करने का अधिकार नहीं होगा। यह स्पष्ट रूप से नई आपराधिक प्रक्रिया संहिता की धारा 145 की उप-धारा (4) के साथ असंगत होगा, जो कहती है कि, यदि संभव हो, तो मजिस्ट्रेट तय करेगा कि धारा 145 की उप-धारा (1) के तहत पारित आदेश की तारीख पर कौन सा पक्ष विवादित वस्तु के कब्जे में था। इस प्रकार उप-धारा (4) स्पष्ट करती है कि सामान्य रूप से और मुख्य रूप से कब्जे के प्रश्न का निर्णय करना मजिस्ट्रेट का कर्तव्य है।

दंडपाणि पेला के मामले (4) (सुप्रा) में उल्लिखित तीन परिस्थितियों को उसी क्रम में ध्यान में रखते हुए, अनुभवी न्यायाधीश ने आगे निर्धारित किया:-

"क्योंकि नई आपराधिक प्रक्रिया संहिता के तहत, मजिस्ट्रेट को यह अधिकार दिया गया है कि वह कार्यवाही के निष्कासन के बाद भी संलग्नता को जारी रख सकता है और इसलिए, विधानसभा द्वारा उन सभी परिस्थितियों में जिनमें मजिस्ट्रेट विवादित वस्तु को संलग्न कर सकता है, एक ही स्थान पर दिया गया है,

सतगुरु जगजीत सिंह और अन्य बनाम जीत कौर व अन्य

(के. एस. तिवाना जे)

अर्थात्, धारा 146(1)। आपराधिक प्रक्रिया संहिता के अध्याय X का अंतर्निहित उद्देश्य शांति और सौहार्द को बनाए रखना है और इसलिए, यह निश्चित रूप से वांछनीय है कि कब्जे का प्रश्न मजिस्ट्रेट द्वारा जब भी संभव

हो और जितनी जल्दी हो सके निर्णय किया जाए ताकि शांति भंग से बचा जा सके। जहां आपातकाल के कारण संपत्ति को संलग्न किया जाता है, ऐसी संलग्नता केवल उन मामलों में लागू होती है जहां मजिस्ट्रेट स्वयं कब्जे के प्रश्न का निर्णय कर रहा है और उसके निर्णय तक शांति बनाए रखना आवश्यक है। अन्य दो मामलों में संलग्नता का उद्देश्य शांति बनाए रखना है, सक्षम न्यायालय द्वारा पक्षों के अधिकारों के निर्णय की प्रतीक्षा करते हुए। इन तीनों मामलों में, हालांकि, यह मजिस्ट्रेट ही होगा जो निर्णय करेगा कि किसी भी चरण में संलग्नता को वापस लिया जाना है या नहीं। इसलिए, यह स्पष्ट है कि धारा 146(1) पर शाब्दिक व्याख्या का अनुसरण करना न केवल एक विसंगत स्थिति की ओर ले जाएगा बल्कि धारा 145 में शामिल मुख्य प्रावधानों के साथ भी असंगत होगा। मजिस्ट्रेट केवल इसलिए संपत्ति को संलग्न करने से बचेगा क्योंकि ऐसी संलग्नता उसके अधिकार क्षेत्र को समाप्त कर देगी। यह संभवतः विधानमंडल का इरादा नहीं हो सकता।"
सी.ए. डिसूजा के मामले (7) (सुप्रा) में, बॉम्बे उच्च न्यायालय की एक खंडपीठ ने कहा: –

"यदि धारा 146 को धारा 145 से पृथक पढ़ा जाए, तो याचिकाकर्ताओं की ओर से आग्रह की गई शाब्दिक व्याख्या संभव थी। धारा 146 की शाब्दिक व्याख्या पर, उपयुक्त प्रावधान को जितना संबंधित है, वह यह कहता है कि यदि मजिस्ट्रेट किसी समय धारा 145 की उप-धारा (1) के तहत आदेश देने के बाद मामले को आपातकालीन मानता है, तो वह विवादित वस्तु को तब तक संलग्न कर सकता है जब तक सक्षम न्यायालय उससे संबंधित पक्षों के अधिकारों का निर्णय करता है उस व्यक्ति के संबंध में जो कब्जे का हकदार है। हालांकि, जैसा कि ऊपर बताया गया है, धारा 145 और 146, अचल संपत्ति के कब्जे से संबंधित विवादों के निर्धारण के संबंध में एक समग्र योजना का विचार करते हैं, और यह प्रतीत होता है कि धारा 146 के प्रावधान धारा 145 के अंतर्गत प्रक्रिया के उद्देश्य की सहायता के लिए बनाए गए हैं, जिस उद्देश्य का निर्धारण यह है कि कौन सा पक्ष प्रारंभिक आदेश की तारीख पर कब्जे में था और ऐसे पक्ष को कब्जे में रखने का अधिकारी घोषित करना है, जब तक कि कानून के उचित पाठ्यक्रम में उससे बेदखल नहीं किया जाता और ऐसे कब्जे के सभी व्यवधानों को रोकना है जब तक कि ऐसी बेदखली नहीं होती। यदि केवल इसलिए कि प्रारंभिक आदेश पारित होने के बाद प्रक्रिया के समाप्त होने के दौरान, मजिस्ट्रेट मामले को आपातकालीन मानता है और उस आधार पर प्रक्रिया को समाप्त करता है, तो यह उद्देश्य विफल हो जाएगा। हमारे दृष्टिकोण में, धारा 146 के उक्त

प्रावधानों को बनाने में विधानमंडल का इरादा आपातकाल उत्पन्न होने पर मजिस्ट्रेट को धारा 145 के अंतर्गत प्रक्रिया के निर्णय तक विवादित वस्तु की रक्षा करने के लिए आवश्यक शक्तियां प्रदान करना है। हमें लगता है कि धारा 146 के प्रावधान धारा 145 के प्रावधानों के सहायक हैं। यदि शाब्दिक व्याख्या का परिणाम कुछ

अन्य प्रावधानों को व्यर्थ या निरर्थक बनाने का होता है, तो सामंजस्यपूर्ण निर्माण का नियम शाब्दिक व्याख्या के नियम पर प्रभावी होना चाहिए। प्रावधानों के सामंजस्यपूर्ण निर्माण पर, हमें यह प्रतीत होता है कि धारा 146 को एक स्वतंत्र धारा के रूप में न समझा जाए, बल्कि इसे धारा 145 के एक हिस्से के रूप में समझा जाए और धारा 145 के प्रावधानों को अधिनियमित नहीं किया जा सकता है। धारा की शाब्दिक व्याख्या के परिणामों को ध्यान में रखा जाना चाहिए, क्योंकि, यदि ऐसी व्याख्या अपनाई जाती है, तो केवल आपातकालीन स्थिति उत्पन्न होने के कारण, धारा 145 के अंतर्गत प्रक्रिया को अचानक समाप्त करना होगा। इस तरह की व्याख्या पर, धारा 145 के अंतर्गत प्रक्रिया की पूरी योजना व्यर्थ और निष्फल हो जाएगी। हमें नहीं लगता कि विधानमंडल का ऐसा इरादा हो सकता है। इसलिए, हमारा विचार है कि मजिस्ट्रेट केवल इसलिए अपने कर्तव्य से मुक्त नहीं हो जाता क्योंकि उसने अपने समक्ष चल रही प्रक्रिया के दौरान आपातकालीन आधार पर एक संलग्नता आदेश पारित किया है, क्योंकि वह मामले को आपातकालीन मानता है। धारा 146 की उप-धारा (1) की व्याख्या के संबंध में हमारे द्वारा लिए जा रहे दृष्टिकोण में, हम यह मानते हैं कि यदि मजिस्ट्रेट धारा 145 की उप-धारा (1) के तहत प्रारंभिक आदेश देने के बाद किसी भी समय आपातकालीन आधार पर विवादित वस्तु को संलग्न करता है, तो उसे जांच करने और धारा 145 की उप-धारा (6) के अंतर्गत अंतिम आदेश पारित करने के लिए बाध्य होना चाहिए। ऐसे अंतिम आदेश पारित करने पर, आपातकालीन संलग्नता स्वाभाविक रूप से समाप्त हो जाएगी। हालांकि, यदि मजिस्ट्रेट किसी विशेष पक्ष के संपत्ति के कब्जे में होने के बारे में निश्चित निष्कर्ष पर नहीं पहुंच पाता है, तो आपातकालीन संलग्नता तब तक जारी रहेगी जब तक सक्षम न्यायालय, अर्थात् सिविल न्यायालय विवाद से संबंधित विषय वस्तु के पक्षों के अधिकारों का निर्णय नहीं करता है। धारा 146 की उप-धारा (1) के प्रावधान के अनुसार, यदि वह संतुष्ट है कि विवादित वस्तु के संबंध में शांति भंग की कोई संभावना अब और नहीं है, तो मजिस्ट्रेट के लिए संलग्नता को कभी भी वापस लेना संभव होगा।"

सतगुरु जगजीत सिंह और अन्य बनाम जीत कौर व अन्य

(के. एस. तिवाना जे)

इस मामले में दिया गया उत्तर यह था कि मजिस्ट्रेट केवल इस कारण से अपने कर्तव्य से मुक्त नहीं हो जाता कि उसने अपने समक्ष चल रही प्रक्रिया के दौरान आपातकाल उत्पन्न होने के आधार पर एक संलग्नता आदेश पारित किया है।

(7) नई संहिता की धारा 145 और 146 लाभकारी प्रावधान हैं। वे नई संहिता के अध्याय X में आते हैं। इस अध्याय का शीर्षक है "सार्वजनिक व्यवस्था और शांति का रख-रखाव"। इन प्रावधानों का उद्देश्य संहिता में किसी भूमि या जल के संबंध में विवाद को लेकर पक्षों के बीच संघर्ष को कम करना और यह निर्धारित करना है कि आदेश की तारीख पर विवाद के विषय वस्तु के कब्जे में कौन था या रिपोर्ट के दो महीने के भीतर किसे गलत तरीके से बेदखल किया गया था। यह संहिता में प्रदत्त इन लाभकारी प्रावधानों का मुख्य उद्देश्य है। अध्याय X के योजना में, 'डी' भाग, जो "अचल संपत्ति के संबंध में विवाद" से संबंधित है, धारा 145 पहले आती है। इस धारा की उप-धारा (1) के अनुसार, यदि मजिस्ट्रेट अपने स्थानीय क्षेत्राधिकार के भीतर भूमि या जल से संबंधित विवाद के कारण शांति भंग की संभावना के बारे में संतुष्ट है, तो वह लिखित आदेश में अपने इस प्रकार संतुष्ट होने के कारणों का उल्लेख करेगा और ऐसे विवाद में संबंधित पक्षों को उसके न्यायालय में एक निर्धारित तारीख और समय पर उपस्थित होने के लिए आदेशित करेगा ताकि वे विवाद के विषय के वास्तविक कब्जे के तथ्य के संबंध में अपने-अपने दावों के लिखित विवरण प्रस्तुत कर सकें। धारा 145(4) के तहत, मजिस्ट्रेट का मुख्य कर्तव्य यह निर्णय करना है कि कौन सा पक्ष और किस पक्ष के विवाद के विषय वस्तु के कब्जे में था और इस तरह के निर्णय पर पहुंचने के लिए दिशा-निर्देश इस उप-धारा में ही प्रदान किए गए हैं। यह निर्धारण उन्हें पक्षों द्वारा प्रस्तुत किए गए लिखित विवरणों और उनके समक्ष प्रस्तुत किए गए साक्ष्यों के आधार पर करना है, लेकिन कब्जे के अधिकार के योग्यताओं के संदर्भ के बिना। यदि धारा 146(1) के तहत विवाद के विषय वस्तु के संलग्नता के बाद ये कारक निर्धारित नहीं किए जाने हैं, तो अध्याय X, भाग 'डी' को बनाने में विधानमंडल का वास्तविक उद्देश्य विफल हो जाएगा। यदि कोई मजिस्ट्रेट धारा 146(1) के अंतर्गत इस प्रावधान में दिए गए कारणों के आधार पर आपातकालीन स्थिति की गंभीरता को समझते हुए विवेक का उपयोग करता है और विवाद के विषय वस्तु को संलग्न करता है, तो मेरे विचार में, इससे संहिता की धारा 145 के अंतर्गत प्रक्रिया का स्वचालित रूप से समापन नहीं होता है। शाह, जे. के शब्दों में डिसूजा के मामले में 7 (सुप्रा), "इस तरह की व्याख्या पर, धारा 145 के अंतर्गत प्रक्रिया की पूरी योजना व्यर्थ और निष्फल हो

जाएगी।" मैं इस स्थिति को धारा 146 की उप-धारा (1) के प्रावधान के प्रकाश में एक अन्य कोण से भी देखता हूँ। इस प्रावधान के अनुसार मजिस्ट्रेट विवाद के विषय वस्तु के संबंध में शांति भंग की कोई संभावना न रहने पर किसी भी समय संलग्नता को वापस ले सकता है। यदि यह विचार स्वीकार किया जाता है कि धारा 146(1) के तहत संलग्नता के बाद मजिस्ट्रेट अपने कर्तव्य से मुक्त हो जाता है और विवाद के पक्षों को अपने दावों के लिखित विवरण प्रस्तुत करने या अपने दावों के समर्थन में उसके समक्ष साक्ष्य प्रस्तुत करने के लिए नहीं कह सकता है, तो उस स्थिति में वह इस संपत्ति का क्या करेगा जो उसके साथ कानूनी रूप से हिरासत में थी। वह किसे कब्जा वापस करेगा? ऐसे मामले उत्पन्न हो सकते हैं जिनमें पक्ष किन्हीं कारणों से सक्षम न्यायालय के पास जाने से बच सकते हैं, जो धारा 146(1) पर याचिकाकर्ताओं के अधिवक्ता द्वारा उनके उपरोक्त उद्धृत प्राधिकारों की सहायता से रखी गई व्याख्या के अनुसार, एक सिविल न्यायालय है। उस स्थिति में, जिस कब्जे के संबंध में मजिस्ट्रेट ने धारा 145 के तहत संज्ञान लिया है, उसका निर्णय कैसे किया जाएगा। धारा 145(4) के अनुसार, मजिस्ट्रेट का कर्तव्य संहिता के अध्याय X-D के अंतर्गत कब्जे पर निर्णय करना है। धारा 145 में कब्जे के किसी सिविल अधिकार की कल्पना नहीं की गई है। दो अतिचारियों के बीच का विवाद भी इस संहिता की धारा 145 के तहत निर्णीत किया जाना है। इस संहिता की धारा 145 के तहत आरंभ की गई प्रक्रिया को संहिता के अध्याय X 'डी' के प्रावधानों के अनुसार तार्किक अंत तक ले जाना होता है और संलग्नता के बाद प्रतिस्पर्धी पक्षों को आधे रास्ते में छोड़कर प्रक्रिया को बीच में नहीं छोड़ा जा सकता है। संलग्नता से एक बार हो जाने पर यह नहीं माना जा सकता है कि कब्जे की वितरण उस व्यक्ति से बच जाएगी जो गलत तरीके से बेदखल हुआ है, इसके बावजूद कि धारा 145 में उल्लिखित दावों के बयान और साक्ष्य उसे मजिस्ट्रेट द्वारा कब्जे की बहाली का अधिकारी बनाते हैं।

(8) विधान की व्याख्या के स्थापित सिद्धांतों के अनुसार, प्रावधानों को विधान की योजना और उस अध्याय के प्रकाश में, जिसमें वे प्रदान किए गए हैं, उस उद्देश्य को पूरा करने के लिए सामंजस्यपूर्ण रूप से व्याख्या किए जाने चाहिए जिसके लिए वे बनाए गए हैं। सामंजस्यपूर्ण निर्माण के उद्देश्य से, नई संहिता की धारा 145 और 146(1) को एक साथ पढ़ा जाना चाहिए ताकि सार्वजनिक शांति और सौहार्द के रख-रखाव के उद्देश्य को प्राप्त किया जा सके। व्याख्या का नियम यह है कि दो प्रावधानों को एक साथ रखकर फिर उनका समग्र और तुलनात्मक अध्ययन किया जाए। जब यह किया जाता है, अध्याय X के प्रावधानों की पृष्ठभूमि में, इससे जो वैध परिणाम निकलता है वह यह है कि धारा 146(1) धारा 145 के अधीनस्थ है। इसके लिए मैं डी.सूजा के मामले (7) (सुप्रा) में दिए गए अवलोकनों से समर्थन लेता हूँ। यदि किसी प्रावधान को दो व्याख्याओं के अधीन किया जा सकता है, जिनमें से एक विधान के उद्देश्य की प्राप्ति के अनुरूप है और दूसरा उस उद्देश्य को नकारता

है, तो न्यायालय उस व्याख्या को अपनाएगा जो विधान की योजना और उद्देश्य को बढ़ावा देती है। इस सिद्धांत के मद्देनजर, यदि धारा 146(1) की शाब्दिक व्याख्या, जैसा कि मेरे समक्ष तर्क दिया गया है, धारा 145 के उद्देश्य को नकारती है और उसके तहत प्रक्रिया को अचानक समाप्त कर देती है, भले ही यह धारा 145 के प्रावधानों द्वारा इरादा नहीं किया गया हो, तो उसे वह अर्थ नहीं दिया जा सकता है। मैक्सवेल ने अपनी पुस्तक 'विधान की व्याख्या' के 12वें संस्करण में, पृष्ठ 228 पर अवलोकन किया है: "जहां एक विधान की भाषा, इसके सामान्य अर्थ और व्याकरणिक संरचना में, विधान के स्पष्ट उद्देश्य का प्रत्यक्ष विरोध करती है, या किसी असुविधा या अजीबता की ओर ले जाती है जिसे शायद विधायक ने इरादा नहीं किया हो, तो इस पर ऐसी व्याख्या की जा सकती है जो शब्दों के अर्थ और यहां तक कि वाक्य की संरचना को संशोधित करती है। यह व्याकरण के नियमों से हटकर, कुछ विशेष शब्दों को असामान्य अर्थ देने या उन्हें पूरी तरह से अस्वीकार करने के आधार पर किया जा सकता है, क्योंकि यह माना जाता है कि विधायक ने जो शब्दों का अर्थ दिया है, उसका इरादा नहीं किया होगा, और किए गए संशोधन मात्र लापरवाह भाषा के सुधार हैं और वास्तव में विधायक के सच्चे इरादे को दर्शाते हैं।" उसी पुस्तक के पृष्ठ 105 पर, उसी विद्वान लेखक ने व्यक्त किया: "एक पाठ के किसी ऐसे निर्माण को अपनाने से पहले जिसमें एक से अधिक अर्थ हो सकते हैं, इससे उत्पन्न होने वाले प्रभावों या परिणामों पर विचार करना महत्वपूर्ण है, क्योंकि वे अक्सर शब्दों के वास्तविक अर्थ को संकेत करते हैं। कुछ वस्तुएं हैं जिन्हें विधायिका ने अभिप्रेत नहीं माना है, और ऐसे निर्माण से बचा जाना चाहिए जो उनमें से किसी एक की ओर ले जाए। इसलिए, किसी अधिनियम में निहित शब्दों (विशेषकर सामान्य शब्दों) के प्रभाव को सीमित करना अक्सर आवश्यक होता है, और कभी-कभी न केवल उनके मूल और शाब्दिक अर्थ से, बल्कि व्याकरणिक निर्माण के नियमों से भी हटना पड़ता है जहां यह अत्यंत असंभाव्य प्रतीत होता है कि उनके व्यापक मूल या व्याकरणिक अर्थ वास्तव में विधायिका के वास्तविक इरादे को व्यक्त करते हैं।"

(9) राम आधिन के मामले में (6) (सुप्रा) व्यक्त की गई आशंका कि मजिस्ट्रेट विवाद के विषय वस्तु को संलग्न करने से बच सकते हैं क्योंकि इससे उनका अधिकार क्षेत्र समाप्त हो जाएगा, ठोस आधार पर है। यदि धारा 146(1) के तहत संलग्नता के बाद प्रक्रिया निष्फलता के रूप में समाप्त होनी है, तो मजिस्ट्रेट इन प्रक्रियाओं में उस रुचि को नहीं दिखा सकते हैं जैसा कि वे वर्तमान में संलग्नता के पक्ष में ले रहे हैं।

(10) चंदू नाइक के मामले में (8) (सुप्रा), तथ्य यह थे कि अचल संपत्ति के संबंध में एक विवाद पर, संहिता की धारा 145 के तहत प्रक्रिया आरंभ की गई थी। मजिस्ट्रेट ने 29 जुलाई 1975 को धारा 145 के तहत एक प्रारंभिक आदेश पारित किया, जिसमें पक्षों से उसके समक्ष उपस्थित होने और अपने लिखित विवरण प्रस्तुत करने के लिए कहा गया। उसी तारीख को, उन्होंने संहिता की धारा 146(1) के तहत विवादित संपत्ति को

संलग्न किया। अपीलकर्ताओं ने 2 अगस्त 1975 को अपने लिखित विवरण प्रस्तुत किए। इसके बाद, मजिस्ट्रेट ने समय-समय पर मामले की सुनवाई की। एक पक्ष की आपत्ति पर, मजिस्ट्रेट ने यह दृष्टिकोण लिया कि महाराष्ट्र खाली भूमि (अनधिकृत कब्जा और सारांश बेदखली का निषेध) अधिनियम, 1975 की धारा 8 के कारण उन्होंने मामले के साथ आगे बढ़ने का अधिकार खो दिया था। उच्च न्यायालय ने संशोधन में उनके निष्कर्षों से सहमति व्यक्त की। अपील में सुप्रीम कोर्ट ने यह निर्धारित किया कि प्रश्न में प्रक्रिया समाप्त नहीं हुई थी और उन्हें मजिस्ट्रेट द्वारा संहिता की धारा 145 और 146 के प्रावधानों के अनुसार निपटाना था। मामले को पुनर्विचार करते हुए, सुप्रीम कोर्ट ने मजिस्ट्रेट को इन शब्दों में दिशा-निर्देश दिए: -

"मजिस्ट्रेट, पहले उदाहरण में, संहिता की धारा 145 के विभिन्न प्रावधानों के अनुसार प्रक्रिया को समाप्त करने का प्रयास करेगा। यदि वह उसके समक्ष प्रस्तुत या प्रस्तुत किए जाने वाले साक्ष्यों पर विचार करके किसी पक्ष के कब्जे की घोषणा करने में सक्षम होता है, तो वह ऐसा करेगा। उस स्थिति में दूसरे पक्ष को कब्जे में घोषित पक्ष के कब्जे (जिसमें उप-धारा (4) के प्रावधान के आवेदन को आवश्यक माना जाता है, उसमें भी माना गया कब्जा) में किसी भी व्यवधान को निर्मित करने से रोका जाएगा। तब, मजिस्ट्रेट को धारा 146 की उप-धारा (1) के प्रावधान के अनुसार संलग्नता को वापस लेना होगा, क्योंकि, उसके आदेश के अनुसार विवाद के विषय वस्तु के संबंध में शांति भंग की कोई संभावना अब और नहीं होगी। मजिस्ट्रेट द्वारा कब्जे में नहीं पाए गए पक्ष को अपनी शिकायत का निवारण, यदि कोई हो, कहीं और खोजना होगा। यदि, हालांकि, मजिस्ट्रेट ने निर्णय लिया कि धारा 145 की उप-धारा (1) के तहत बनाए गए आदेश की तारीख पर विवादित संपत्ति पर किसी भी पक्षकार का कब्जा नहीं था या यदि वह यह संतुष्ट नहीं कर सकता कि उनमें से कौन उस समय विवाद के विषय पर कब्जा कर रहा था, तो उसे कब्जे को हटाने की आवश्यकता नहीं है जब तक कि एक सक्षम न्यायालय धारा 146(1) में प्रदत्त तरीके से पक्षकारों के अधिकारों का निर्धारण न कर दे। ऐसी स्थिति में, यदि आवश्यक हो, तो धारा 146 की उप-धारा (2) का सहारा लिया जा सकता है, चाहे मजिस्ट्रेट द्वारा या सिविल कोर्ट द्वारा, जैसा कि मामला हो।"

11. चंदू नायक के मामले (उपरोक्त) में, प्रारंभिक आदेश के बाद मजिस्ट्रेट ने धारा 146(1) के तहत संहिता के विषय-वस्तु को संलग्न किया था। धारा 146(1) की भाषा के बावजूद, उपरोक्त टिप्पणियां सुप्रीम कोर्ट द्वारा की गई थीं। राम आदिन के मामले (6) (उपरोक्त) और (7) डी. सूजा के मामले (उपरोक्त) के आधार पर मैं जो दृष्टिकोण ले रहा हूं, वह चंदू नायक के मामले (8) (उपरोक्त) में सुप्रीम कोर्ट द्वारा की गई टिप्पणियों के अनुरूप है, कि धारा 146(1) के तहत संलग्नता स्वतः ही कार्यवाही के समापन का कारण नहीं बनती है।

सतगुरु जगजीत सिंह और अन्य बनाम जीत कौर व अन्य

(के. एस. तिवाना जे)

12. उपरोक्त चर्चा का सार यह है कि नए कोड की धारा 146(1) के तहत संलग्नता धारा 145 के तहत कार्यवाही के समापन का कारण नहीं बनती है और जिस मजिस्ट्रेट ने धारा 145(1) के तहत एक प्रारंभिक आदेश पारित किया है, उसे मामले के साथ आगे बढ़ने का अधिकार है और पक्षों के बयानों और उनके सामने प्रस्तुत साक्ष्य के दृष्टिकोण से धारा 145(4) के प्रावधानों के अनुसार कब्जे का निर्धारण करना होता है। इस मामले में मजिस्ट्रेट ने पक्षों से साक्ष्य पेश करने के लिए कहकर और जब वह पेश किया गया तो उसे दर्ज करके कुछ भी गलत या अवैध नहीं किया। इन टिप्पणियों के दृष्टिकोण से, याचिका खारिज की जाती है। मजिस्ट्रेट को उपरोक्त किए गए टिप्पणियों के अनुसार आगे बढ़ने के लिए निर्देशित किया जाता है। पक्षकारों को उनके वकील के माध्यम से 25 अप्रैल, 1978 को मामले की सुनवाई कर रहे कार्यकारी मजिस्ट्रेट के सामने उपस्थित होने के लिए निर्देशित किया गया है।

के.टी.एस.

ए. डी. कोशल, मुख्य न्यायाधीश और एस.एस. संधावालिया, न्यायाधीश;

फकीर चंद और अन्य - अपीलकर्ता

बनाम

वित्तीय आयुक्त, पंजाब, चंडीगढ़ आदि - प्रतिवादी

लेटर्स पेटेंट अपील संख्या 1977 का 366

7 अप्रैल 1978

पत्र: पेटेंट (लाहौर)-धारा 10-उच्च न्यायालय में लंबित कार्यवाही-ऐसी प्रक्रिया के दौरान एक एकल न्यायाधीश द्वारा स्थगन आदेश का प्रदान, अस्वीकार या रद्द करना-क्या यह धारा 10 के अर्थ में एक निर्णय है और क्या इसके खिलाफ अपील सक्षम है।

अस्वीकरण : स्थानीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के सीमित उपयोग के लिए है ताकि वह अपनी भाषा में इसे समझ सके और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है । सभी व्यवहारिक और आधिकारिक उद्देश्यो के लिए निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रमाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य के लिए उपयुक्त रहेगा ।

रामनीक कौर
प्रशिक्षु न्यायिक अधिकारी
(Trainee Judicial Officer)
फ़रीदाबाद, हरियाणा